VOL- IX | ISSUE- III | MARCH | 2022 | PEER REVIEW e-JOURNAL | IMPACT FACTOR 7.331 | ISSN 2349-638x

भारतीय संगीत के उद्‌गम एवं विकास में भक्ती एक अविरल स्त्रोत शक्ती

डॉ. सारिका विवेक श्रावणे,
सहाय्यक प्राध्यापक, रिसर्च गाईड (संगीत विभाग)
स्व.छ.मु. कढी कला महाविद्यालय, अचलपूर कॅम्प,
जीला-अमरावती,महाराष्ट्र,

सारांश :-

भक्ती और संगीत का चिरंतन एवं शाश्वत संबंध है । संगीत के उत्पत्ती का पुर्वइतिहास अगर देखा जाए तो सृष्टी निर्माण होने से पहले स्वर्ग, देव, गांधर्व, अप्सरा, किन्नर यह संकल्पनाएँ थी, तो आदीदेव शिवशंकरजी के हाथों मे डमरू, क्रिष्ण के हाथों मे बासूरी, मॉ सरस्वतीजी की हाथों मे वीणा, नारद के हाथों में तुंबरू तथा पार्वती का लास्य नृत्य, उर्वशी, मेनका आदी अप्सराओं के नृत्य यह प्राचीनतम संगीत के प्रमाण है जो की देवदेविताओं से ही हम संगीत का आरम्भ मानते है, ओंकारनाद, ब्रह्मनाद जो की पवित्र एवं भक्तिरसप्रधानत्व की ओर है । हमारे प्राचीन ग्रंथोमे, पुराणोंमे भी भगवत् उपासना के लिए संगीत को महत्वपूर्ण साधन के रूप में मान्यता दी गई है । 'पद्‌मपुराण' के ''नाहं वसामि वैकुंठे---'' कथन से भक्ती के लिए गान की अनिवार्यता पर प्रकाश पडता है । साथही भगवान की संगीतप्रियता पर भी । अनेक ग्रंथोंव्दारा विव्दानों के कथन अनुसार भक्ती और संगीत की घनिष्ठता प्रमाणित होती है जिसका विवेचन प्रस्तुत शोधनिबंध व्दारा मैं यहॉ करना चाहूंगी ।

उद्‌देश :-

भारतीय संगीत के दो उद्‌देश है । एक इश्वरोपासना एवं मनरंजन । आज मनरंजन पक्ष पर भी अधिक भर दिया जाता है तो इस माध्यमसे संगीत की आध्यात्मिक पक्ष को युवा पिढी परिचित हो ।

भक्ती और संगीत के शाश्वत संबंध की धारणा की पुष्टी संगीत-ग्रंथों मे प्राप्त उद्‌धारणों से होती है लेकिन भारतीय संगीत-ग्रंथों की मान्यता का आधार एवं हमारे समस्त ग्यान का आदि स्त्रोत वेद ही है । '' जिसका महत्व दर्शाना ।

संशोधन पध्दती :-

सबसे प्राचीनतम वाड्.मय वेद है । वेद, उपनिषद, ब्राह्मण ग्रंथों के अतिरिक्त भागवत पुराण, रामायण, महाभारतादि ग्रंथों में भक्ती और संगीत के अभिन्न साहचर्य के प्रभूत प्रमाण प्राप्त होते है, संगीत एवं भक्ती इस संदर्भ में प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन, विव्दानों के मत जानना, एवं लेख, शोधनिबंध प्राप्त जानकारी प्रस्तुत शोधनिबंध का आधार है ।

परिकल्पना :-

१) मानव का चरम लक्ष्य मोक्ष, आत्मसाक्षात्कार अथवा ईश्वर-सानिध्य प्राप्त करना माना गया है । नाही केवल मनरंजन, इसका ग्यान होगा ।

२) संगीत के अंतर्गत स्वर, लय तथा शब्द तिनों की उचित संगम ही उत्कृष्ट भावसंगीत अथवा भक्ति-संगीत है इसका महत्व स्पष्ट होगा ।

३) मार्गीसंगीत, भक्तीसंगीत, संगीत का आध्यत्मिक पक्ष इस संदर्भ में युवा पिढी को संशोधन करने की प्रेरणा मिलेगी ।

व्याप्ती और सिमाएँ :-

संगीत की उत्पत्ती, ईश्वरप्राप्ती, वेदों के प्रमाण तथा इ.स. १४ वी शताब्दी से १६ वी शताब्दी तक का आम भक्ति साहित्य की दृष्टी से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है । इस काल में भक्तिआंदोलन अपने चरम उत्कर्ष पर था । और इसी समय निर्गुण संत भक्ति, प्रेममार्गी, कृष्णभक्ती तथा रामभक्ती की प्रेरणा से हिन्दी के सर्वोच्य साहित्य का निर्माण हुआ । यहॉतक का शब्दमर्यादा के कारण संक्षिप्त अध्ययन होगा ।

साहित्य की समीक्षा :-

१. उत्तर भारतीय सुगम संगीत (गायन) के क्षेत्र के भक्ति संगीत परम्परा का निर्वाह-एक आलोचनात्मक अध्ययन, शोधप्रबंध मल्होत्रा सुकृति, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली ।

२. भक्ति मार्ग व्दारा संगीत का प्रचार, कॅवरजीत कौर, लघुशोधप्रबंध, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ।

३. भक्ति संगीत का शास्त्रीय संगीत में योगदान, लघुशोधप्रबंध, गौरिशंकर कुमार, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ।

४. हिंदुस्थानी संगीत में भक्ति काव्य लघुशोधप्रबंध, मंजू बाला, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ।

५. सुर एवं मीरा के भक्ति पदों में संगीत तत्व : एक तुलनात्मक अध्ययन, लघुशोधप्रबंध, रागिनी शर्मा, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ।

६. भक्ति संगीत में गीतों का सांगीतिक विवेचन, पुनम शर्मा, लघुशोधप्रबंध, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला ।

आदि अनेक अभ्यासपूर्ण विवेचन मिलते है ।

संगीत को भक्ती का उपादान माना गया है तथा हमारा भक्तिसंगीत विभिन्न दृष्टीकोन से परिपूर्ण है । इस संदर्भ में अध्ययन करने का मेरा प्रयास है । क्योंकि इशप्राप्ती के साथही सुख-शान्ति का राजमार्ग भी भक्तीसंगीत है ।

मुख्यभाषण :-

परमात्मा-ओंकारनाद-वेद-पद्मपूराण-संगीत-ब्रजभूमी-भक्तीरसप्रधानत्व-मनरंजन- प्रायोगीक पक्ष - शुध्द रूप-सुख-शान्ति ।

प्रस्तावना :-

भारतीय संस्कृति आदिकाल से ही आध्यत्मिक एवं धार्मिक संस्कारों से युक्त रही है । मानव को जीवात्मा और इश्वर को परमात्मा माना गया है । भारतीय संगीत के उद्गम एंव विकास में भक्ति एक अविरल स्त्रोत शक्ति है एवं यही वह केन्द्र बिंदू है, जिससे संगीत की राग रागिनियों, राग-नियमों, तालों एवं धृपद, धमार आदि विभिन्न गेय विधाओं में उसका पक्ष सजीव एवं सार्वगभ्रित रूप में उभरता है ।

मध्यकाल में भक्तिसंगीत अत्यन्त तीव्र गति से विकसित हुआ, विस्तारित हुआ । संगीत की वास्तविक गरिमा और उसके सुरक्षण का केन्द्र ब्रजभूमि ही है । प्राचीन ग्रन्थों में जो संगीत के वास्तविक स्वरूप को जानने के लिए ब्रज का साहित्य एवं संगीत दर्पण स्वरूप है क्योंकि इस स्थानपर अनेक भक्त संगीतज्ञों, संतों, आचार्यों आदि महात्माओं ने अपने युग-युगान्तर में भारतीय संगीत को भक्ती का अविभाज्य अंग बनाया । अतः यही कारण है कि शास्त्रीय संगीत की लगभग सभी गेय विधाओं में ब्रज भाषा का प्रमुख स्थान है । प्रबन्ध गायन के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण जयदेवकृत 'गीतगोविंद' काव्यग्रंथ के पश्चात मध्ययुग धृपद का एक प्रमुख स्त्रोत कहा जा सकता है । तो भारतीय संगीत का मुल स्वरूप भक्तिरसप्रधान है ।

विषय प्रवेश :-

भगवान का प्रत्येक नाम एक मन्त्र है, स्वर और लय के आधार से मन्त्र की शब्द या चेतनाशक्ती जागृत होती है ।

'अथातो भक्ति व्याख्या स्यामः ।
सा त्वस्मिन परमप्रेमरूपा ।।'

अर्थात भक्ति परम प्रेम रूप है । शांडिल्य भक्तिसुत्र के अनुसार इश्वर में अनुरक्ती ही भक्ति है ।

'अथातो भक्ति जिज्ञासा, सा परनुरक्तिरीश्वरे ।।' 'नारदिय भक्तिसुत्र' अनुसार भक्ति इश्वर के प्रति प्रेमरूपा है एवं अमृतस्वरूप भी है । जिस परम प्रेमरूपा और अमृतस्वरूपा भक्ति को पाकर मनुष्य तृप्त हो जाता है, सिध्द हो जाता है ।

जिसप्रकार स्त्री, पुत्र, धन आदि में आसक्ति, मोह, ममता होती है, वहि यदि भगवान में हो जाए तो भक्ति बन जाती है । संगीत के अंतर्गत स्वर, लय तथा शब्द अर्थात काव्य इन तिनों के सम्यक निर्वाहपर ध्यान देना संगीत शास्त्र में अवधान कहलाता है और इन तिनों का उचित संगमही उत्कृष्ट भावसंगीत अथवा भक्तीसंगीत को जन्म देता है । संगीत को भक्ती का उपादान माना गया है जैसे की मैने यहॉ पहले भी उल्लेखित किया की 'मध्यकालीन प्रबंध प्रकार या धृपदोंमें अधिकतर भक्तीकाव्य भक्तीरस ओतप्रोत है । हमारे यहॉ तो कहना चाहिए की संगीत भक्ति के लिए ही है ।

स्व. राजेन्द्र बाबू के शब्दों में संगीत का महान गुण है की वह चित्तवृत्तियों को शांत तथा एकाग्र करके श्रोताओं को तन्मय कर देता है । इसीलिए जप-तप और ध्यान से भी अधिक महत्व भजन तथा किर्तन को माना गया है । भक्तिसंगीत में किर्तन का भी एक अलग एवं आत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है । संगीत की उत्पत्ती में अनेक विव्दानों के विचारप्रवाह है परन्तु सृष्टी के पहले ही देवदेवताओं से संगीत का आरम्भ हम जानते है । शंकरजी के हाथों में डमरू, श्रीकृष्ण के हाथों में बासूरी, सरस्वतीजी के हाथेां में विणा आदि तत्कालिन प्रमाण है एवं पवित्र तथा भक्तिरसप्रधानत्व की ओर है । संगीत का प्रचार होने लगा तब भी वेदों में ऋचाओं का पठन संगीतमय होने लगा । इश्वरप्राप्ती, मोक्षमार्ग के लिए ही संगीत के उत्पत्ती का प्रयोजन मना जाता था । स्वरित, उदात्त, अनुदात्त इन तीन स्वरोंमें ऋचाओंका पठन होता था सामवेद संगीतमय था, ओंकार आराधना, किर्तन, भजन जागरण के माध्यम से इशप्राप्ती या मोक्षप्राप्ती हो सकती है ऐसा माना जाता था ।

'अनन्य प्रयोजनानवरत निरतिशय प्रिय विशदतम
प्रत्यक्ष तापन्नानुध्यान रूप भक्तैकलभ्यः । ''

भक्ती श्रध्दा विश्वास एवं प्रेमपुरित भक्तिहृदय का वह मधुर मनोराग है, जिसके व्दारा भक्त और भगवान के पारस्परिक संबंध का निर्धारण होता है । उपास्य तत्व की प्राप्ती का उपाय अर्थात भक्ति 'अभिधेय' प्रयोजन है । जीवन की परम प्रयोजनीय वस्तू 'पुरूषार्थ शिरोमणि प्रेम महाधन है । इस प्रयोजन के पूर्ण हो जाने पर सारी आवश्यकताएँ निवृत्त हो जाती है । और परमात्मा का महत्व प्रिती-संबंध की स्थापना करती है प्रिती ही भक्ति का उत्स है । भगवान के प्रति एकनिष्ठ प्रेम का उन्नयन ही भक्तीरस का उद्‌देक है ।

भक्ती-संगीत का प्राचीनतम ग्रंथ 'सामवेद' है । वैदिक समय में पंचभूत तत्वों-ग्रंथों तथा नक्षत्रों की पूजा करने का विधान था, अतः वेदों में लिखे गए श्लोंको के वर्ण्य विषय भी इन्ही की आराधना से संबध्द हे । संभवतः संगीत की महत्त को स्वीकार करने के कारण इन स्तुतिपरक मत्रों को संगीतात्मक स्वरूप प्रदान किया गया है । सामवेद इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है । भक्ती संगीत परंपरा उस समय प्रवाहित हो रही थी, जब भारतीय संगीत की साधना बैजू बख्शू एवं तानसेन जैसे महान कलाकारों व्दारा की जा रही थी । उस समय शास्त्र के नियमों एवं प्रायोगिक पक्ष में उनके शुध्द रूप का व्यवहार होता था । इसके साथ भक्ती परम्परा अथवा इस परम्परा के वाहकों व्दारा भी शुध्द शास्त्रीय संगीत ही प्रयोग किया जाता था । क्योंकि इस समय भक्ति संगीत का आधार शास्त्रीय संगीत था ।

भक्ती-संगीत का मुख्य केंद्र होने का गौरव भारत में ब्रज को प्राप्त है । ब्रज के देवालयों के साथ संगीत की सुदृढ आबध्दता ब्रज में देवालयों की स्थापना के साथ मानी जाती है । जनसाधारण में भगवत्-वंदना साधारणतः कीर्तन-भजन आदि के रूप में प्रचलित थी, परंतु मंदिरों और देवालयों में इनके साथ-साथ शास्त्रोक्त राग-रागिनियों, तालों तथा ध्रुपद-धमार आदि गेय विधाओं का भी पर्याप्त प्रयोग किया गया, जहॉ स्वर-वैचित्र्य की अपेक्षा संगीत के भक्त्यात्मक स्वरूप को अधिक प्रश्रय मिला ।

गायन के साथ देवालयों के भक्ति-संगीत में नृत्य की भी परंपर महत्वपूर्ण है ।

भारतीय संस्कृति में संगीत को भक्ति का श्रेष्ठतम माध्यम माना जाता रहा है । नृत्य की उत्पत्ति भगवान शंकर से मानी जाती है, माता वागीश्वरी को वीणाधारिणी तथा संगीत और साहित्य की देवी माना जाता है । भगवान् श्रीकृष्ण की मुरली को समस्त विश्व जानता है । जों इस बात का प्रमाण है कि संगीत पवित्र और पुजनीय है ।

संगीत में भक्तिरस की प्रतिष्ठा सुर, तुलसी, कबीर तथा मीरा आदि गायक सन्तों के व्दारा हुई । श्रृंगार, वीर व करून आदि नवरसों के अतिरिक्त भक्ती को स्वतंत्र रस के रूप में प्रतिष्ठापित करने का श्रेय भी इन्हीं को है ।

निष्कर्ष :-

भारतीय संगीत के दो उद्‌देश है एक ईश्वरोपासना के लिए और दुसरा मनोरंजन । डॉ. परांजपे जी के शब्दों में ''संगीत लोकरंजन तथा इश्वर रंजन दोनों के लिए उपयुक्त है ।'' इन्ही उद्‌देशों को लेकर भारतीय संगीत के स्वरूप का निर्माण हुआ है । प्राचीन ग्रंथों में भक्ती और संगीत के अभिन्न साहचर्य के प्रभूत प्रमाण प्राप्त होते है ।

प्राचीन काल से ही मंदीरों में हर दिन किर्तन-भजन का प्रयोग सभी सज्जनों को भक्तिधरोहर में ले जाने लगा । इस समय मराठी एवं हिंदी संतसाहित्य में भी अनेक संतों ने सत्पुरूषोंने भक्तीरसप्रधान काव्य की निर्मीति की जो अजरामर है । तत्कालीन समाज में जो अनिष्ठ परंपराएँ थी उनको मिटानें के लिए भी काव्यप्रयोजन परमात्मा में विलीन होने के साथ ही उपदेशात्मक काव्यनिर्मिती होने लगी । जब परकीयों ने आक्रमण किया तब जिस राजा को संगीत प्रिय था उस काल में वह कला बहरने लगी और जिस राजा को संगीत अप्रीय था उसने मंदीरों में भी भजन किर्तन करने पर पाबंदी लगाई । संक्षेप्त यह कहना चाहूँगी कि प्राचीन काल से लेकर आजतक शुध्द पवित्र भक्तीमय संगीतही परमात्मा से जुडने का एक अनुबंध रहा है । किसी भी मंगल समय, पुजा-अर्चा करते समय भक्ती की निर्मिती संगीत सहाय्यता से व्दिगुनी होती है इसमें कोई संदेह नही ।

काल के परिवर्तन के साथ लोगों की अभिरूची बदलती जा रही है । वीलासीनता बढ गयी है । परिवर्तन निसर्ग का नियम है परंतु आज भी भक्तीसंगीत की महत्ता कम नही । केवल गायन के माध्यम से ही नही वरण् वाद्यों से भी भक्तीरस प्रधान धुनों का निर्माण संगीत जगत को एक देन है । उदाहरण तौर पर उस्ताद बिसमिल्ला खॉ की शहनाई से पुरा आसमां गुंज उठता है । मंगलप्रसंग की धुनों का असर एक जादू सी खुशबु बिखेर देता है । इसलिए संगीत को भक्ती का उपादान माना गया है इसमे कोई संदेह नही ।

संदर्भ :-

१) डॉ. सुचेता बिडकर, संगीत शास्त्र विज्ञान भाग-२ भक्तीसंगीत, संस्कार प्रकाशन, मुंबई २१.११.२०१३, पृ. क्र. ०७
२) रामस्वार्थ चौधरी, मधुर रसः स्वरूप और विकास, .
३) श.श्री. परांजपे, भक्तीसंगीत का उद्गम और विकास, भक्तीसंगीत अंक, मार्च १९४९, संगीत कार्यालय हाथरस, पृ. ११
४) डॉ. गोविंदप्रसाद शर्मा, 'हमारा भक्तीसंगीतःविभिन्न दृष्टीकोन', भक्तीसंगीत अंक, मार्च १९४९, संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ क्र.२२
५) डॉ. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे, भक्ति संगीत के कलाकार, संगीत अंक फरवरी १९७०, संगीत कार्यालय, हाथरस, पृ.क्र. ३९
६) भक्ति-संगीत अंक, संगीत अंक मार्च १९४९, संगीत कार्यालय, हाथरस, पृ.क्र. ३२
७) गौरव शुक्ला, ब्रज के देवालयों में संगीत परम्परा, संगीत कला विहार, मार्च २०१५, गांधर्व महाविद्यालय, मिरज, पृ.क्र.४८